REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 4 | JANUARY - 2019

स्वतन्त्रता–प्राप्ति में हिन्दी साहित्यकारों का योगदान

कृष्ण कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर , शहीद उधम सिंह राजकीय महाविद्यालय, मटक माजरी, इन्द्री.

प्रस्तावना–

सभी महान राष्ट्रीय आंदोलनों का शुभारम्भ जनता के अविख्यात या अनजाने, गैर प्रभावशाली व्यक्तियों से होता है, जिनके पास समय और बाधाओं की परवाह नकरने वाला विश्वास तथा इच्छा शक्ति के अलावा और कुछ नहीं होता ।

मैजिनी, संदर्भ :

नौजवान भारत सभा, लौहार का घोषणा पत्र से साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है । अपने युग–परिवेश के राजनीतिक आंदोलनों, सांस्कृतिक, सामाजिक परिवर्तनों एवं आर्थिक संघर्षों आदि से वह कदाचित अप्रभावित नहीं रह सकता । किसी देश में किसी समय का ठीक–ठाक चित्र हम कहीं देख सकते हैं तो उस देश के तत्कालीन साहित्य में । कई त्रिगुणायत कामत है – "युग और समाज की सारी आकांक्षाओं, सम्पूर्ण चेतनाओं, सभी विचारधाराओं और आंदोलनों का रूप तत्कालीन साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है ।"

हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते है – "यह केवल राजनीतिक संघर्ष का काल नहीं था, केवल सामाजिक शक्तियों के एक दूसरे से टकराने का भी समय नहीं था, बल्कि एक नवीन युग के जन्म लेने का समय था । यहां से हमारा देश नयी मोड़ पर आकर खड़ा हो गया और उसके साथ ही देश की साहित्यिक चेतना भी नवीन दिशा की ओर मुड़ी । प्राचीन भारतीय संस्कार तब भी प्रबल रूप से वर्तमान में थे । परंतु वे भी बिल्कुल नयी दिशा में मुंह करके खड़े हो गये । यहां से शिक्षित समुदाय में एक नये दृष्टिकोण की संभावना उत्पन्न हुई । मनुष्य के सामाजिक संबंधों और अन्त वैयक्तिक संबंधों के मान में परिवर्तन होने लगा और क्रमशः पुराने संस्कारों से मुक्त नवीन दृष्टि उत्पन्न हुई जिसने राजनीतिक, साहित्यिक, धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में नयी हलचल पैदा कर दी ।"[1] यही हलचल नवजागरण कहलाई ।

[1]. हजारी प्रसाद : हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ० 201

तत्कालीन परिवेश के अनुरूप हिन्दी साहित्य में नवजागरण के अग्रदूत हैं – "भारतेन्दु" । जहां वे साहित्य के क्षेत्र में कवि, नाटककार, इतिहासकार, समालोचक, पत्र-सम्पादक आदि थे, वहीं समाज एवं राजनीतिक क्षेत्र के एक राष्ट्रचेता और सच्चे पथ-प्रदर्शक थे । उन्होंने महामारी, अकाल, टैक्स, आर्थिक शोषण आदि पर लेखनी चलायी । इसके साथ-साथ उसके काव्य में देश-प्रेम, सामाजिक रूढ़ियों का खंडन सच्ची-शिक्षा और स्वतन्त्रता, विधवा-विवाह तथा बाल-विवाह आदि विषयों को अभिव्यक्त किया है तथा भारतेन्दु मंडल के अन्य साहित्यकारों (बाबू बाल मुकुन्द कुष्ठ, प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट आदि) ने इनका अनुकरण किया है । इस काल के साहित्यकारों का समाज-सुधारक का रूप ही प्रमुख है और यही समय की मांग भी थी ।

समाज सुधारक की भूमिका के साथ-साथ वे अंग्रेजों की शोषण नीति के खिलाफ भी डटकर खड़े हुए हैं – भीतर-भीतर सब रस चूसें, हंसि-हंसि के तन मन मूसें, जाहिर बातन में अति तेज, क्यों सखि सजनी; नाहिं अंग्रेज ।

सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम के बाद भारतीय सृजनात्मकता में सबसे बड़ा मोड़ यह आया कि साहित्य की सभी विधाओं में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध भारत की संगठित राष्ट्र भावना का स्वर मुखर हो गया । पहली बार धर्म, जाति प्रदेश की संकुचित परिधि से निकलकर राष्ट्रीयता ने अपने में सम्पूर्ण देश को अंतरभूत कर लिया । आरंभ में तो राजभक्ति के साथ देशभक्ति का समझौता दिखाई दिया, लेकिन शीर्घ ही राजभक्ति की भावना समाप्त हो गई ।[2]

नए जमाने की मुकरियां अपनी जाति, देश, धर्म और भाषा को विदेशी पहियों के नीचे कुचलते देखकर भारतेन्दु का हृदय चीत्कार उठता है –

"आबहु ! सब मिलि रोबहु भारत आई
हा ! हा ! भारत-दुर्दशा न देखी जाई ।"

बालमुकुन्द गुप्त का ध्यान समाज की विशेष आर्थिक और राजनीतिक पराधीनता की ओर गया है । राष्ट्र की आर्थिक स्वतन्त्रता के लिए बालकुकुन्द गुप्त स्वदेशी आंदोलन का समर्थन करते हैं-

'अपना बोया आप खावें, अपना कपड़ा आप बनावें
माल-विदेशी दूर भगावें, अपना चरखा आप चलावें'

---

2. स० डॉ० नगेन्द्र, भारतीय साहित्य का समेक्ति इतिहास, लेख-भारतीय राष्ष्रीय सांस्कृतिक कविता (कृष्णदत्त पालीवाल), हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ० 378

यहां गुप्त जी स्वामी-विवेकानन्द की विचारधारा से प्रभावित हैं । उनका मत था - 'स्वराज्य प्राप्ति में स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग की महत्त्वपूर्ण भूमिका है । प्रताप नारायण मिश्र कांग्रेस के अधिवेशनों में प्रायः जाया करते थे और राष्ट्रीय भावना की छाप उनकी कविताओं में स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं ।

एक विचारक का मत है - "विचार और भूख क्रांति को जन्म देते हैं ।" विचार काव्य की अपेक्षा गद्य में ज्यादा होते हैं । यह मात्र संयोग ही नहीं अपितु समय की मांग ही थी कि हिन्दी साहित्य (1857) में विचारों के अनुरूप गद्य तथा उसकी अन्य विधाओं का जन्म हुआ यथा - निबंध, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि ।

भारतेन्दु-युग में विचार अभिव्यक्त करने का सबसे सशक्त माध्यम- समाचार-पत्र, निबंध और नाटक रहे हैं । भारतेन्दु युग के सभी साहित्यकार कुशल सम्पादक थे । भारतेन्दु ने विदेशी वस्तुओं के खिलाफ 'स्वदेशी का प्रतिज्ञा-पत्र' अपनी पत्रिका कवि-वचन-सुधा में प्रकाशित किया। सन् 1878 में सरकार के खिलाफ कड़ा लेख लिखने के कारण बाबू बालमुकुन्द गुप्त को 'हिन्दोस्तान-पत्र' से नौकरी छोड़नी पड़ी । भारतेन्दु युग के नाटकों का लक्ष्य भी राष्ट्रीय चेतना को जगाना तथा समाज-सुधार करना है । भारत-दुर्दशा में भारतेन्दु की राष्ट्रीय भावना, 'बाल-विवाह' में बालकृष्ण भट्ट की समाज-सुधारक भावना तथा राधाकृष्णदास के 'दुखिनी बाला' में अनमेल विवाह के परिणामों को व्यक्त किया गया है ।

प्रतापनारायण मिश्र के 'गौ-संकट', 'कलिकौतक रूपक' आदि नाटक भी राष्ट्र-जागरण एवं समाज-सुधार की प्रेरणा से रचित हैं ।

'भारतवर्ष में सुधार का क्या उपाय है', 'इग्लैंड और भारतवर्ष' आदि निबंध भारतेन्दु की राष्ट्रीय भावना प्रदर्शित करते हैं । 'प्रदीप' नामक पत्र में भी राजनीतिक विषयक निबन्ध प्रायः निकला करते थे, उन निबंधों में अंग्रेज शासकों की कटु आलोचना भी रहती थी । "अंग्रेजी राज्य के इस कड़े शासन में जब हम सब ओर से दबे हैं और चारों ओर से ऐसे कस दिये गये हैं कि हिल नहीं सकते ।" -'नये तरह का जुनून' (भट्ट निबंधावली)

राष्ट्रीय आंदोलनों से प्रभावित होकर प्रताप नारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' पत्र में कांग्रेस की जय और 'देशी-कपड़ा' नामक निबंधों को छापा । 'कांग्रेस की जय' निबंध में लेखक का हृदय राष्ट्रीय भावनाओं से उद्वेलित हो उठा है और बेगवती धारा के समान उसके भावों का स्वतः प्रकाशन हो गया है । इसके अतिरिक्त बदरीनारायण चौधरी तथा गदाधर सिंह भट्ट आदि के निबंधों में यही राष्ट्रीय भावना देखने को मिलती है ।

वस्तुतः इस काल के साहित्यकार, देश-प्रेमी, पत्रकार, समाज सुधारक ही अधिक हैं काव्य और साहित्यकार कम । इन्होंने तत्कालीन विचारकों और दार्शनिकों के विचारों को अधिक सरस और सरल बना कर लोक हृदय तक पहुंचाया तथा स्वाधीनता संग्राम में अमूल्य योगदान दिया । एक इतिहासकार के शब्दों में -

The socio-culture Renassance played an important role in the development of our political struggle for nation independence.

बीसवीं शती का प्रथम दशक लार्ड कर्जन के कुशासन का काल है। बंग-भंग लार्ड-कर्ज़न के कुकृत्य की पराकाष्ठा थी । 'वन्दे-मातरम' के नारे पर प्रतिबंध लगाया गया ।

तिलक को छः वर्ष की सजा हुई तथा 1910 में प्रेस एक्ट आदि घटनाएं घटी । इन घटनाओं से प्रभावित होकर यदि विद्वानों ने समाज को भारत की तत्कालीन दुरावस्था पर क्षोभ प्रदर्शित करने के लिए बाध्य किया तो दूसरी ओर अतीत की भव्यता पर गर्व करना चाहिए, इसकी ओर संकेत किया ।

इन घटनाओं और स्वदेशी-आंदोलनों ने संस्कृति के एक नये प्रकार की राष्ट्रवादी कविता, गद्य और पत्रकारिता को जन्म दिया जो आवेश और आदर्श से युक्त थी । 2 सितंबर, 1905 में "भारत-मित्र" के सम्पादक बालमुकुन्द गुप्त ने लार्ड-कर्जन को 'विदाई सम्भाषण' प्रकाशित किया था। कर्जन के कुकृत्यों का स्मरण दिलाते हुए सम्पादक ने बड़े साहस के साथ प्रश्न किया था - 'क्या आँख बंद करके मनमाने हुक्म चलाया कि किसी की कुछ ना मानना शासन है? क्या प्रजा की बात पर कभी कान न देना, उनको दबाकर उनकी मर्जी के विरूद्ध जिद्द से सब काम किए चले जाना ही शासन कहलाता है । ....इस समय आपकी शासन अवधि पूर्ण हो गयी, तथापि बंग विच्छेद किये बिना घर जाना आपको पसंद नहीं हैं । नादिर से बढ़कर आपकी जिद्द है । 21 अक्तूबर, 1905 को भारत मित्र में बंगविच्छेद शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ - आपने शासन काल में बंगविच्छेद इस देश के लिए अन्तिम विषाद और आपके लिए अंतिम हर्ष'। शाहिस्ता खां का खत और शिवशम्भु के चिट्ठे भारत मित्र के प्रमुख स्तम्भ हैं जिनमें बालमुकुन्द गुप्त का क्रांतिकारी मानस मुखर हैं।

मैथिलीशरण गुप्त की भारत-भारती आवेश और आदर्श से युक्त रचना है । जिसमें उनकी राष्ट्र भावना मुखर हुई है -

हम कौन थे क्या हो गये और क्या होंगे अभी,
आओ विचार करें मिलकर ये समस्याएं सभी
X X X
भारत तुम्हारा आज यह कैसा भयंकर वेश है,
है और सब निःशेष, केवल नाम ही अवशेष है ।

बार-बार जब हमें अपने प्राचीन गौरव, विद्या, कला कौशल, निर्भयता और शक्ति का स्मरण कराकर उकसाया जाता है तो हमें अपनी अशक्तता और स्वाधीनता पर लज्जा आती हैं -

यह पुण्यभूमि प्रसिद्ध है इसके निवासी आर्य हैं
विद्या कला कौशल, सभी के प्रथम प्राचार्य हैं,
सन्तान उनकी यह यद्यपि हैं आज दुर्गति में पड़े
पर चिन्ह अपनी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े ।

अतएव राष्ट्र चेतना का प्रथम रूप अतीत के गौरववान के रूप में देखने को मिलता है । द्विवेदी युग के निबन्धकारों ने यह कार्य बखूबी निभाया है । प्राचीन भारत की एक झलक, भारतीय पुरानी राजनीति, सम्राट अशोक का शासन काल, तुलसी दास के राजनीतिक विचार,

भारतवर्ष की सभ्यता की प्राचीनता, प्राचीन भारत में लोकसत्तात्मक राज्य, भारत की प्राचीन शिक्षा का आदर्श, आदि निबंधों में अतीत के गौरव पर प्रकाश डाला गया है । इस काल के नाट्यकार जयशंकर प्रसाद ने अपने नाटकों (चन्द्रगुप्त, स्कन्द गुप्त आदि) के द्वारा भारतीय संस्कृति के उज्जवल पक्षों को चित्रित किया है । उनका मानना था – 'कोई भी जाति अपने गौरवमय अतीत को सामने रखे बिना अपना उद्धार नहीं कर सकती ।'

भारतीय राजनीति में (1918) गांधी जी का आगमन एक सुखद घटना है । प्रथम बार राजनीति को धर्म से जोड़ने का श्रेय गांधी जी को है । हिन्दी साहित्य में अनेक कवि ऐसे हैं जिन पर गांधी जी का प्रभाव है और उन्होंने बड़ी निष्ठा से उनकी विचारधारा को अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति दी । सत्याग्रह, अहिंसा, असहयोग, अछूतोद्धार, साम्प्रदायिक एकता, ग्राम सुधार, नारी स्वतन्त्रता, समाज–सुधार उन साहित्यकारों के प्रमुख प्रतिपाद्य विषय थे । गांधी जी ने चरखा कात कर शरीर ढकने का संदेश, स्वदेशी वस्तु पहनने का सिद्धांत भारतीय जनता को दिया । कवि ने इस सिद्धांत का भारतीयों से इस प्रकार आग्रह किया है –

'तुम अर्द्ध नग्न रहो अशेष समय में
आओ हम काते बुनें काम की लय में । (म॰ श॰ गुप्त)

सोहन लाल द्विवेदी ने अपनी कविताओं 'युगावतार गांधी' में गांधी को जननायक मानवतावादी, भारत की स्वतन्त्रता के जन्मदाता, युगद्रष्टा, युग सृष्टा के रूप में, सुमित्रानन्दन पत ने 'बापू का आत्मदान', महात्मा जी के प्रति एवं बापू आदि कविताओं में आदर्शों के दीप, नवमानवतावादी संस्कृति के निर्माता, भारत के हृदय के रूप में, रामधारी सिंह दिनकर ने 'बापू' कविता में सहज शान्ति के दूत, भारतभूमि के भाग्य के रूप में उनकी स्तुति एवं वंदना की है।

हिन्दी साहित्य में गांधीवाद से सब से ज्यादा प्रभावित हैं – माखन लाल चतुर्वेदी । गांधीवादी विचारधारा के प्रबल समर्थक होने के नाते सत्य और अहिंसा से आप नहीं डिगे, बल्कि इन्हीं दो शान्त शस्त्रों से आपने ब्रिटिश साम्राजयवाद का सामना किया । गांधी के विचारों से प्रभावित फूल की चाह, मरण त्यौहार, कैदी और कोकिला, सिपाही, जलियांवालाबाग, जवानी शीर्षक कविताएं पढ़ते ही मन में राष्ट्रप्रेम की उमंग पैदा होने लगती हैं । तिलक के निधन से शोकार्त्त कवि देश के दुर्भाग्य पर दृष्टिपात करता हुआ उसकी नव–निर्माण कल्पना को छोड़ नहीं सका है–

बलि होने की परवाह नहीं, मैं हूं कष्टों का राज्य रहे
मैं जीता, जीता, जीता हूँ, माता के हाथ स्वराजय रहे
– माखन लाल चतुर्वेदी

LBP PUBLICATION

निराला का समय भारतीय इतिहास का महत्त्वपूर्ण समय है, वह अनेक घटनाओं और उत्तेजनाओं का दौर है जिसका सम्बद्ध भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से है । परमानंद श्रीवास्तव निराला के रचनाकर्म का मूल्यांकन करते हुए लिखते हैं –

"स्वाधीनता के लिए संघर्ष की जो चेतना इस अवधि में दिखाई देती है, वह चेतना वृहत्तर सांस्कृतिक नवजागरण का हिस्सा है । अपने समय की चेतना के साथ निराला अतीत से जो सार्थक मुठभेड़ करते हैं, उसके पीछे भी इसी सांस्कृतिक नवजारण की प्रेरणा है । भारतीय सामाजिक जीवन में हो रहे महत्त्वपूर्ण संक्रमण और परिवर्तन के प्रति सजग इस दौर के साहित्य में यह समझ प्रत्यक्ष है कि साम्राज्यवाद के विरोध में चलने वाले आंदोलन की सफलता सामंती संस्कृति के विरोध में बगैर संभव नहीं हैं । स्वाधीनता इस युग का बहुअर्थव्यंजक शब्द है । जब निराला कहते है – स्वाधीन का ही एक अर्थ निर्भय है – तो वे स्वाधीनता के अनेक आयामों की ओर संकेत करते हैं ।"[3]

भारतीयों से 'जागो फिर एक बार' का आह्वान करने वाले निराला, उथल-पुथल करने वाले बाल कृष्ण नवीन, सांसों के बाल ताज उड़ाने की 'हुंकार' भरने वाले दिनकर और झांसी की रानी की वीरता का बखान करने वाली सुभद्रा कुमारी चौहान में राष्ट्रीय एवं वीरता के भावों की अभिव्यक्ति ओजस्वी स्वर में हुई हैं ।

कथा-शिल्पी प्रेमचंद ने भी प्रथम अभिव्यक्ति युग के अनुरूप दी है – उनके शब्दों में – मैंने गल्प लिखना 1907 में शुरू किया । 'सोजेवतन' 1908 में प्रकाशित हुआ । पर उसे हमीरपुर के कलेक्टर ने मुझसे जलवा डाला था । उनके ख्याल में वह विद्रोहात्मक था । 'राजनीतिक जागरण के उस युग में राष्ट्रीय चेतना को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में अधिक गतिमयता और समुचित दिशा देने में प्रेमचन्द ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी । 1921 में स्वराज्य क्या है? स्वराजय के साधन, स्वराज्य के लाभ आदि पर विशदता एवं गंभीरता से विचार किया है – अपने देश का पूरा-पूरा इन्तजाम जब प्रजा के हाथों में हो तो उसे स्वराज कहते हैं। उनका मानना था कि हमें ऐसी सत्ता की आवश्यकता नहीं है, जहां मि० जोन की जगह मि० सेवक बैठ जाए । स्वतंत्रता प्राप्ति के उनके मायने व्यवस्था परिवर्तन से थे ।

1932 में गांधी जी ने यर्वदा जेल में अनशन शुरू किया । उस महान तप पर प्रेमचंद ने लिखा था– 'भारत की तपोभूमि में इससे पहले भी बड़ी-बड़ी तपस्याएं की गयी हैं पर राष्ट्र के लिए प्राणों की आहुति देने का संकल्प महात्मा गांधी की ही कीर्ति हैं । प्रेमचंद ने गांधी को दधीचि की उपाधि दी और वे उसे अपना गुरु मानते थे । प्रेमचंद के अधिकांश उपन्यास और कहानी गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित हैं । प्रेमाश्रय का प्रेमशंकर रंगभूमि का सूरदास, कर्मभूमि व अमरकान्त तथा गोदान के होरी पर गांधीवाद विचारधारा का गहरा प्रभाव है। प्रेमचन्द की मैजिस्ट्रेट का इस्तीफा, जेल, विश्वास, सत्यमार्ग, हार-जीत आदि कहानियों में राष्ट्रसेवा, सत्य के प्रति आग्रह अहिंसा, नैतिक आचरण, मानव प्रेम एवं मानव-सेवा आदि भावनाओं की बड़ी विशदत्ता एवं निष्ठा में अभिव्यक्ति हुई हैं ।

---

3. परमानंद श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य के निर्माता : निराला, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, पृ० 13

1857 की संवेदना से प्रेमचंद का क्या संबंध हैं? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए ई०एम०एस० नंबूदिरीपाद लिखते हैं – निष्कर्ष यही है कि आपको घटनाओं तथा पात्रों को इस तरह विकसित करना होगा कि आप विघटित हो रहे समाज को नंगा कर सकें और उसके गर्भ से पैदा हो रहे नए समाज के जीवंत पात्रों को उभार सकें । इस दृष्टि से संभव है कि उन रचनाओं में से कुछ जिन्होंने क्रांतिकारी आंदोलन की विचारधारा को स्वीकार नहीं किया है, इसके विकास में सीधे साधे मददकार साबित न हो। लेकिन वे मरणोन्मुख समाज को नंगा करने और नए विकसित होते हुए समाज के पात्रों को सामने लाने का काम तो प्रभावशाली ढंग से कर ही सकते हैं ।"[4] इस दृष्टि से प्रेमचन्द भारत के संघर्षशील किसानों के दर्पण है, जो स्वतंत्रता आंदोलन के माध्यम से अपनी बेहतरी के लिए संघर्ष कर रहे हैं ।

विशंभरनाथ कौशिक की 'अपराधी', भगवती प्रसाद वाजपेयी की प्रेमलता, सुभद्रा कुमारी चौहान की गौरी और निराला की चतुरी-चमार आदि कहानियों में भी राष्ट्रीय भावनाओं का पुट मिलता है । निराला के मतवाला, प्रेमचन्द के हंस और जागरण तथा माखन लाल चतुर्वेदी के कर्मवीर आदि पात्रों ने गांधी के आदर्शों का अनुसरण किया और राष्ट्रीय भावनाओं को प्रसारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी ।

हिन्दी साहित्य के सभी प्रतिनिधि साहित्यकार (1857-1947 ई० तक) अपने परिवेश के विविध संदर्भों के साथ पूरी ईमानदारी से जुड़े हुए थे । उन्होंने परम्परागत, रूढ़, जड़ और अप्रासंगिक सिद्ध हो गयी विचारधाराओं पर प्रश्न चिह्न लगाया तथा राष्ट्र जीवन को सक्रिय बनाने, उसे गति देने और उसका उत्कर्ष करने के लिए समसामयिक युग-बोध से जुड़ी हुई चिन्तन प्रक्रिया को अपनी लेखनी का विषय बनाया । उनकी राष्ट्रीय चेतना का मूल्यांकन राजनीतिक संदर्भों के अतिरिक्त, सामाजिक, आर्थिक आयामों के परिप्रेक्ष्य में किया जाना तर्कसंगत है ।

1857 की क्रांति और उसके बाद के आंदोलन में प्रमुख हाथ हिन्दी प्रदेशों (बिहार, मध्य प्रदेश, उ० प्र० हरियाणा, और पंजाब आदि) का रहा है । यह भाषा की संगठन शक्ति है जो राष्ट्रीय भावना को जन्म देती है । हिन्दी साहित्यकारों ने राष्ट्रीय भावना को प्रसारित करने में प्रमुख भूमिका निभायी । अपनी साहित्यिक भाषा को अधिक सरल, सरस और लोकशैली का पुट देकर भारत के सुप्त-हृदय की राष्ट्रीय भावनाओं को उद्वेलित कर जन-जागरण की लहर समूचे राष्ट्र में कर दी ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति की मूल प्रक्रिया में 'जन-जागरण' है । यह सच भारत की क्रान्ति ही नहीं अपितु संसार करें सभी क्रांतियों के बारे में सत्य है । फ्रांस की कान्ति (1788-89), रूस की क्रान्ति (1917), चीन की क्रान्ति (1945) के मूल में जन-जागरण ही था ।

हिन्दी साहित्य में जन-जागरण की प्रतिध्वनि गूंजती हैं – भारतेन्दु और उनके मंडल के साहित्यकार, गौरवमय अतीत के गुणगान से राष्ट्रीय भावना को जन्म देते हैं -मैथिलीशरण गुप्त और प्रसाद, जातीय संघ शक्ति की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं- निराला, पंत और प्रेमचंद

---

[4]. स० प्रदीप सक्सेना, 1857 : निरूतरता और परिवर्तन, लेख 1857 और प्रेमचंद उद्भावना प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ० 452

इसमें उचित वातावरण का गहरा रंग बोलते हैं – माखनलाल चतुर्वेदी दिनकर और सुभद्रा कुमारी चौहान जो गांधी जैसे कुशल नेतृत्व में पड़कर स्वतन्त्रता में बदल जाता है । और नेहरू के शब्दों में भी व्यक्त हुआ – 'रात के बारह बजे जब कि दुनिया नींद की गोद में होती है भारत नये जीवन और स्वतन्त्रता में प्रवेश करेगा ।

LBP PUBLICATION